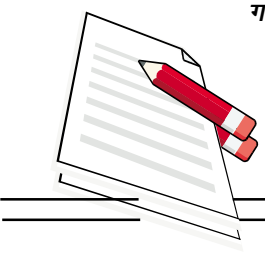

टिप्पणी
टिप्पणी

301hi16

16

अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश

आप रोज़मर्रा की घटनाएँ जानने, सामान्य ज्ञान बढ़ाने तथा मन बहलाने के लिए पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ते होंगे। इनमें हमें लेखों, कहानियों, खबरों, कार्टूनों आदि को पढ़ने और देखने से कई नई जानकारियाँ मिलती हैं और आनंद प्राप्त होता है। पत्र-पत्रिकाओं में कई स्तंभ होते हैं– कुछ स्थायी और कुछ अस्थायी। स्थायी रूप से प्रकाशित होने वाला एक स्तंभ है– संपादकीय, जिसमें किसी समसामयिक विषय या घटना पर गंभीर टिप्पणी की जाती है। जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अपनी राय बनाने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन आवश्यक है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित संपादकीय का तात्पर्य स्पष्ट कर सकेंगे;
- साहित्यिक हिंदी और प्रयोजनमूलक हिंदी में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- संपादकीय के तत्त्वों–विषयवस्तु, समसामयिकता, विवेचनात्मकता, दृष्टिकोण, भाषा-शैली तथा उद्देश्य के आधार पर 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' संपादकीय की विवेचना कर सकेंगे;
- पाठ के आधार पर यह स्पष्ट कर सकेंगे कि किस तरह आम लोगों को शिक्षा से वंचित रखने का षड्यंत्र चलाया जा रहा है;
- मानवऽके विकास में शिक्षा के योगदान को स्पष्ट कर सकेंगे;
- संपादकीय और समाचार में अंतर बता सकेंगे।

टिप्पणी

क्रियाकलाप

चित्र 16.1

1. ऊपर के चित्रों को ध्यान से देखिए और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।
   (क) यह महिला क्या पुस्तक को इसलिए वापस रख रही है क्योंकि 100 रुपए की कीमत बहुत ज्यादा है।
   (ख) क्या पुस्तकों की कीमत इसलिए ऊँची है क्योंकि कागजों के दाम आए दिन बढ़ रहे हैं?
   (ग) कागज के दाम कम रहने से क्या पुस्तकें सस्ती मिलेंगी?
   (घ) क्या आप समझते हैं कि पुस्तक का मूल्य कम होता तो यह महिला पुस्तक को वापस शेल्फ में रखने की बजाए उसे खरीद लेती?
2. (क) आज के किसी हिंदी के अखबार में छपाऽसंपादकीय पढ़िए।
   (ख) पढ़े हुए संपादकीय पर आधारित पाँच वाक्य यहाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

16.1 मूलपाठ

अनपढ़ बनाए रखने की साजिश

रोटी-कपड़ा और मकान के बाद जिस देश में पहली, या कहें एकमात्र आवश्यकता साक्षरता और शिक्षा है, वहाँ ऐसी दृष्टिहीनता या तो मूर्खता के कारण है या फिर धूर्तता के कारण। हो सकता है कि जिन बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आतंक और वर्चस्व को रोकने की आवाजें उठायी जा रही हैं, उन्हीं की गहरी पकड़ हमारी सारी आर्थिक और राष्ट्रीय नीतियों को तय कर रही है। क्योंकि जिन चीजों पर छूट दी गयी है वे सभी तो बाहर से आती हैं। कहीं ऐसा तो नहीं है कि अंतर्राष्ट्रीय इलैक्ट्रोनिक कंपनियाँ

टिप्पणी

जिन रियायतों और दरियादिली के साथ भीतर तक घुस कर 'कंप्यूटर युग' ला रही हैं, उन्होंने हमारे कर्णधारों को ही सबसे पहले रोबोट या मशीन-मानवों में बदल डाला है। खैर, यह तो साफ़ ही है कि इलैक्ट्रोनिक और कंप्यूटरों के क्षेत्र में पुर्ज़े सब बाहर से आयात होंगे और भारतीय उद्योगपति सिर्फ़ उन्हें जोड़ेगा–पेंच कसो, अपना ठप्पा लगाओ और बेच दो। न किसी अनुसंधान की जरूरत है, न विकास की। उगते हुए उद्योग के लिए यह शॉर्टकट कितना आत्मघाती हैं, यह बताने की ज़रूरत नहीं है। अगले दसियों साल उसे परोपजीवी ही बनकर रहना है। यानी वे मूलतः उद्योगपति नहीं, व्यापारी के स्तर पर पटक दिये गये हैं, और बाहरी माल के लिए सिर्फ़ क्लियरिंग एजेंटों के रूप में काम करेंगे।

सारे राष्ट्र को टी. वी., वीडियो और कंप्यूटरी चमत्कारों का दर्शक बनाये रखने और दूसरी तरफ़ पढ़ने-लिखने की चीज़ों को महँगा या अनुपलब्ध करते चले जाने के पीछे एक बाकायदा सुचिंतित योजना है। जनता का ध्यान शोषण से हटाये रखने या शोषण को जायज़ सिद्ध करने के लिए सामंतवाद धार्मिक अनुष्ठानों, कीर्तनों और देवी जागरणों का सहारा लेता है। आज के ये आधुनिक सामंत सारे देश को दूरदर्शन केंद्रों के बढ़ते हुए जाल में बाँधकर अपने चेहरे, वचन या घटिया मनोरंजन पिला रहे हैं। वे आदमी को सोचने-समझने का कोई मौका नहीं देना चाहते। चूँकि ये सिर्फ़ सरकारी माध्यम हैं, इसलिए हर समय या तो नेताओं, मंत्रियों के ज़िंदा-तिलिस्माती भाषण देखिए या फिर कूल्हे और कमर लचकाते चित्रहार निगलिए–उच्च मध्यवर्गीय लोग कैसे शाही खेल खेलते हैं, किन कपड़ों के लश्कारे लेते सूट-टाई पहनते हैं। कौन-कौन से पेय किन कप-गिलासों में और किस अदा से पीते हैं, किन जन्नाटे लेती गाड़ियों और हवाई जहाज़ों में यात्राएँ करते हैं, किन होटलों या पर्वतीय रमणस्थलियों में किलोलें करते हैं–हीनता का मारा मध्यवर्ग और आम आदमी सब देख-देखकर विस्मय-विमुग्ध होता रहेगा और देवलोक के ये प्राणी उसमें हमेशा एक दूरी और हसरत का भाव जगाते रहेंगे, काश, यह जीवन हमारा भी हो सकता। विज्ञापनों के सहारे एक विशेष जीवन-पद्धति हमारे सोच और सपनों को नियंत्रित करने लगी है। कहने की जरूरत नहीं कि यह हसरत ही भ्रष्टाचार की पहली कोंपल है, क्योंकि सही तरीकों से तो वह इनमें से एक ब्रीफ़केस तक नहीं खरीद सकता।

अफ़ीम खिलाने के षड्यंत्र का यह सिर्फ़ एक पहलू है। दूसरी मार ज्यादा गहरी है–आदमी को अपने दिये सपनों और अंधविश्वासों में डाले रखना, सोच-विचार, संस्कृति-साहित्य, वैज्ञानिक और क्रांतिकारी विचारों से काटे रहना–क्योंकि वहाँ से उखाड़कर ही तो उसे आप अपने बनाये गड्डे में घेर कर पहुँचायेंगे। पर्दे के पीछे घिनौनी चालों या दीखती सच्चाई को गहराई से जाँचने की दिशा में लौटाने के सारे रास्ते पहले बंद करने होंगे। सोचने-समझने, अपनी स्थिति का विश्लेषण करने या शतरंज के ऊँचे खिलाड़ियों की चालबाज़ियों को पकड़ने की कामना करना खतरनाक है। हर हालत में जनता को इस खतरे से बचाकर रखना होगा–खतरा यानी स्वतंत्र-निर्भीक सोच।

सारी मानव-सभ्यता को जिन दो आविष्कारों ने आमूल-चूल बदल डाला था, उसमें एक था बारूदी हथियार और दूसरा कागज़–यानी ज्ञानविज्ञान का लिखित दस्तावेज़।

शब्दार्थ

साक्षरता – पढ़ने लिखने का ज्ञान
बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ – ऐसी कंपनियाँ जिनमें एक से अधिक देशों के लोगों की हिस्सेदारी होती है।
वर्चस्व – दबदबा
कर्णधार – नेता, आगे रहने वाले लोग
परोपजीवी – दूसरों के सहारे जीने वाला
अनुपलब्ध – जो सुलभ न हो
रमणस्थली – मन बहलाव के स्थान (रिसोर्ट)
विस्मय – विमुग्ध, भौंचक्का, हक्काबक्का
हसरत – इच्छा, लालसा

टिप्पणी

पत्र-पत्रिकाएँ बड़े उद्योगपतियों के हाथों में हैं, उन्हें प्रायः बधिया बना दिया गया है। वे वही सब कर रही हैं, जो सरकार अपने माध्यमों से चाहती है। दूरदर्शन का वे कागज़ी संस्करण हैं। स्वतंत्र हैं, सिर्फ़ किताबें, इसलिए सारे सरकारी माध्यम और व्यावसायिक पत्रकारिता किताबों को फालतू, अप्रासंगिक, अनुपलब्ध कराने में जी-जान से जुटे हैं। संचार-माध्यमों के किसी भी कोने में किताबें नहीं हैं। सरकार हर गैर-ज़रूरी चीज़ को सब्सीडाइज कर सकती है, चाहे तो उसे रियायती मूल्य पर सुलभ करा सकती है—न कागज़ के मूल्य में कोई कटौती करेगी, न डाकखर्च में कोई छूट देगी—डेढ़ सौ पन्ने की पुस्तक, मूल्य तीस या पैंतीस रुपया, डाकखर्च पाँच या सात रुपया। कैसा मज़ाक है कि लेखकों को सम्मान-पुरस्कार सब हैं, मगर जिस चीज़ ने उन्हें लेखक बनाया है, उन किताबों के लिए कहीं कोई सुविधा नहीं है। शिक्षा और संस्कृति का बजट किस तेज़ी से घटाया गया है—यह देखकर धक्का लगता है।

इसके पीछे सिर्फ़ तीन ही कारण हो सकते हैं : या तो सरकार और सरकारपरस्त पत्रकारिता किताब को निहायत ही फालतू चीज़ समझती है, जिसकी किसी को कोई ज़रूरत नहीं है या फिर उनका ख्याल है कि यह शराब और होटलों जैसा कोई नशा है कि आदमी झख मारकर, बीवी-बच्चों का पेट काटकर, अथवा ब्लैकमनी को ठिकाने लगाने के लिए उन्हें खरीदेगा ही। या फिर हथियारों की तरह ही यह कोई घातक और विस्फोटक चीज़ है, जिसे जनता से दूर रखना है—उन्हें बनाने वाले उपकरणों की कीमतें अंधाधुंध बढ़ाकर या अन्य सुविधाएँ समाप्त करके। सीधे-सीधे हमला करना तो अनपढ़ होना माना जायेगा। और मुझे असली कारण यही लगता है। अभी दो-तीन दशक पहले ही हमारे नेताओं में दुनिया के महत्त्वपूर्ण बुद्धिजीवी रहे हैं, पढ़ने और लिखने वाले लोग। राधाकृष्ण, राजगोपालाचारी, आचार्य नरेन्द्रदेव, के. एम. मुंशी, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, जिन्होंने दुनिया के ज्ञान-विज्ञान, साहित्य-संस्कृति के साथ अपना मानसिक विकास किया था और जिनके पास देश और आदमी को लेकर अपना सपना (विज़न) था। आज न तो व्यक्तित्व की वह ऊँचाई रह गई है, न वैसा नैतिक संकल्प। आम आदमी को विचार, साहित्य, संस्कृति अर्थात् पुस्तक नाम की इस फालतू-सी चीज़ की ज़रूरत क्या है? कुछ वाक्य हैं, जो अपने पहलेवालों से सुनते रहे हैं, इसलिए रट्टू तोते की तरह उन्हें ही दुहरा देते हैं। भीतरी लगाव और सरोकार जब संस्कारों में ही नहीं है तो फिर व्यवहार में कहाँ से आयेगा?

आज जैसा माहौल हो गया है उसमें किताब की बात करना सचमुच बहुत फालतु अप्रासंगिक और हास्यास्पद-सा लगने लगा है— लगता है जैसे आप भैंस के आगे बीन बजा रहे हों। मगर इस सच्चाई को हम कैसे नज़रंदाज़ कर दें कि दुनिया के सशक्ततम राष्ट्र वे ही हैं, जिनके लिए किताबों से जुड़े लोग सबसे महत्त्वपूर्ण रहे हैं। फ्रांस, इंग्लैंड, अमेरिका और रूस—वर्ना समृद्धि तो अरब के शेखों से ज़्यादा किसके पास है? वहाँ क्यों हम सांस्कृतिक दरिद्रता की बात करते हैं? लगता है हम भी अब उसी विसांस्कृतिक वैज्ञानिकता की ओर बढ़ रहे हैं—नंगे, भूखे, अशिक्षित और जड़— लेकिन दूरदर्शनों, कारों और कंप्यूटरों के सामने लाइनें लगाये। दुनिया भर में नोबेल पुरस्कार का इतना शोर शराबा न होता तो हमें इस कंप्यूटरी होड़ में डाल देने वालों को तो शायद यह अंतर करना भी मुश्किल था कि गार्सिया मारखेज और दियेगो गार्सिया में कौन-सा द्वीप है और कौन-सा आदमी? राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डों पर जो किताबें दिखाई देती हैं उन

शब्दार्थ

निर्भीक – निडर
अप्रासंगिक – बेकार, बेमतलब का
सरकार परस्त – सरकार की हाँ में हाँ मिलाने वाला
निहायत – बिल्कुल, पूरी तरह
हास्यापद – हँसी उड़ाने लायक
सबसिडाइज – किसी चीज़ की कीमत कम रखने के लिए उसकी लागत का कुछ भाग सरकार की ओर से दिया जाना

टिप्पणी

पर लेखकों की जगह आर्थर हैली, मैकलीश, लुडलुम, फुलेमिंग, वैलेस, रॉबिन्स जैसे कुछ नाम छपे होते हैं। बट्रेण्ड रसैल, सार्त्र, ताल्स्तोय–? हाँ, अम्मा और नाना कभी-कभी ऐसे कुछ नाम लिया तो करते थे। गांधी–? कुछ लिखता भी था क्या? ऑटनबरो ने अपनी फिल्म में उसे लिखते हुए तो नहीं दिखाया।

बहरहाल, पढ़ना बहुत खतरनाक चीज़ है। इससे आदमी को सोचने, समझने और कुछ करने की बीमारी लगती है। ये पुराने बुड्ढे, शिक्षा, साक्षरता, जागरूकता- अनुसंधान

या पता नहीं, क्या अलाय-बलाय वाली योजनाएँ छोड़ गये हैं। अब न तो उन्हें बंद किया जा सकता है, न ही चलाये रखा जा सकता है। रास्ता सिर्फ़ यही बचा है कि उनका सत्यानाश कर दिया जाये। कैसा खूबसूरत मज़ाक है कि एक तरफ़ नारा है साक्षरता और शिक्षा बढ़ाओ, शिक्षा को नौकरी के साथ नहीं, ज्ञान के साथ जोड़ो–दूसरी तरफ़, साक्षरता, शिक्षा और ज्ञान के सारे साधन-सुविधाएँ समाप्त कर दो, कागज़ और स्याही- छपाई के दामों को आसमान में पहुँचा दो। इसमें आसानी यह है कि उनको सामग्री वही दी जा सकेगी, जो सरकार चाहेगी, खुद पढ़ना-गुनना चाहो तो स्लेट- पट्टी और भोज पत्र। दुनिया के सारे अनपढ़ तानाशाहों ने सबसे पहले या तो पुस्तकालय जलाये हैं या किताबों को कुचला है। देखा, कैसी एहतियात से हमें इक्कीसवीं सदी में ले जाया जा रहा है?

जिन्हें हमने साक्षर और शिक्षित किया है उनकी पहुँच में पढ़ने की सामग्री क्या है, क्या कभी किसी ने देखने की कोशिश की है? उनके सामने बिछी है चिकनी, चमकदार, रंगीन पत्रिकाएँ, पॉकेट-बुक्स, और उन सब में लगातार परोसा जा रहा है हत्या, बलात्कार, आगजनी, लूटमार, सांप्रदायिकता, हिंसा का रक्तबीजी ज़हर, भ्रष्टाचार और घूस-फरेब के खोजपूर्ण भंडाफोड़, ब्लू-फिल्मों के मुद्रित संस्करण। लगता है जैसे हम चारों तरफ़ चल रही एक स्टण्ट फिल्म के बीचों-बीच बैठे हैं। यानी हर समय या तो यही सब निगलते हैं या फिर देखते हैं सरकारी प्रचार के दूरदर्शनी सपने, प्रायोजित इंद्रलोक, अश्लील और पलायनी फिल्में, देवी-जागरण, लाटरियाँ, जो थोड़ा–बहुत समय मिलता है, उसमें इन्हीं सबके वीडियो चालू कर लेते हैं। इसी निष्कलुष वातावरण में हम और हमारी नयी पीढ़ी तैयार हो रही है। चिन्तन, पुस्तक या ज़िंदगी के किसी भी रचनात्मक और पौज़िटिव पक्ष या मूल्य को देखने–परखने का अवसर कहाँ है? जो बचे भी हैं, वे आपा-धापी में धकेलकर निरंतर पीछे कर दिये जा रहे हैं। हमारे नायक हैं समाज सेवक, स्मगलर, गिरोहबाज, गुंडा, चमत्कारी बाबा, और सर्व-व्यापक भगवान की तरह हर जगह पहुँच जाने और हर असंभव कर डालने वाले सुपरमैन। अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, सतियों और तांत्रिकों की सर्व-शक्तिमत्ता, नरबलि और बहू-दहन हमारे विकृत और सैडिस्टपन को हल्की सनसनाहट ही देते हैं। हमें

शब्दार्थ

सांस्कृतिक दरिद्रता – अच्छे संस्कारों की कमी, संस्कृति की समझ न होना

विसांस्कृतिक वैज्ञानिकता – ऊपरी चकाचौंध के पीछे भागते हुए बुनियादी मूल्यों और आचरण की अनदेखी करना।

अलाय-बलाय वाली – ऊल-जलूल, बेतुकी, फ़िज़ूल

दाम आसमान में पहुँचाना – दाम बहुत बढ़ाना, महँगाई

रक्तबीजीज़हर – जानलेवा ज़हर (रक्तबीज़ एक राक्षस था जो शुम्भ तथा निशुम्भ का सेनापति था)

निष्कलुष – साफ़, पवित्र

टिप्पणी

फुरसत भी कहाँ दी जा रही है कि सारे आर्थिक ढाँचे और मानसिक माहौल को खरीद लेने वालों के चेहरे देख सकें। हर आदमी एक-दूसरे से अलग कर दिया गया है, बीच के संवाद को तोड़कर व्यक्ति को माध्यम (मीडिया) से कील दिया गया है और हमने मान लिया है, जिन्हें इस सबको लेकर कुछ करना है वे कोई दूसरे ही लोग हैं, कम-से-कम हम नहीं हैं।

अपने ऋषि-मुनि मूर्ख नहीं थे जिन्होंने कुछ विशेष लोगों की जिंदगी से शिक्षा यानी किताब को एकदम बाहर निकाल कर उन्हें सेवा धर्म सिखाया था। किताब आदमी को ज्ञान देती है, किताब विचार देकर उसका दिमाग खराब करती है, किताब उसे अपने भीतर उतार कर अपनी स्थिति और नियति से साक्षात्कार कराती है, किताब उसे सपने और भविष्य देती है, किताब ही है, जो स्वतंत्र है।

नहीं, जिसे जाहिल, मूर्ख, परतंत्र और निर्भर बनाकर रखना है उसके हाथ में किताब नहीं दी जायेगी। उसे इतनी फुरसत नहीं दी जायेगी कि कुछ पढ़े या आपस में संवाद स्थापित करे। किताब या तो उसकी ज़िंदगी से बिल्कुल ही निकाल दी जायेगी या फिर इतनी दुर्लभ और पिलपिली कर दी जायेगी कि उसके होने न होने से फ़र्क न पड़े—कागज़, छपाई, डाकखर्च के हथियारों से उसका एक-एक पंख काट डाला जायेगा ताकि सीताहरण के पवित्र अभियान में यह जटायु, बाधा बनकर न खड़ा हो— हिटलर ने जब फ्रांस पर अधिकार किया तो उसने अपनी फ़ौजों को दो ही आदेश दिये थे, ''बैंक डी फ्रांस गालीमार प्रकाशन-गृह को अपने कब्जे में ले लो.....''

या खुदा, ये प्रायोजित नाखुदा हमें कहाँ ले जा रहे हैं...?

—राजेंद्र यादव

(''काँटे की बात', हंस, अक्तूबर, 1986)

शब्दार्थ

सैंडिस्टपन – दूसरों को दुख पहुँचाकर प्रसन्न होने की प्रव त्ति होना

नियति – भाग्य

साक्षात्कार – आमने-सामने होना

पिलपिली – कमज़ोर

नाखुदा – नाव खेने वाला, नेत त्व करने वाला

16.2 बोध प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए:

1. रोटी, कपड़ा और मकान के बाद देश की प्राथमिक आवश्यकताएँ क्या हैं?
2. आज के इस आधुनिक सामंत देश को दूरदर्शन और अनेक बढ़ते हुए चैनल क्या संदेश दे रहे हैं?
3. दुनिया के सारे अनपढ़ तानाशाहों ने सबसे पहले पुस्तकालय जलाए हैं या किताबों को कुचला है। क्यों?

दिए गए विकल्पों में से सही विकल्प चुनकर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

4. आज के माहौल में किसकी बात करना फालतू लगने लगा है:

   (क) टेलीविजन (ग) किताब

   (ख) कंप्यूटर (घ) फिल्म

5. पाठ में किस नेता के नाम का उल्लेख नहीं है:

   (क) गांधी (ग) राम मनोहर लोहिया

   (ख) सुभाषचन्द्र बोस (घ) राजगोपालाचारी

6. वर्तमान पत्रकारिता किनके हाथों में है:

(क) सरकार (ग) बड़े उद्योगपति

(ख) पत्रकार (घ) नेता

7. जिनके आतंक और वर्चस्व को रोकने की आवाज़ें उठाई जा रही हैं, वे हैं–

(क) बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ (ग) विदेशी टी. वी. चैनल

(ख) सरकारी प्रतिष्ठान (घ) प्रकाशन गृह

16.3 आइए समझें

विद्यार्थियो! 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' पाठ पढ़ने से पहले यह समझ लेना आवश्यक है कि प्रयोजनमूलक हिंदी क्या है। और दोस्तो! आपने 'एक था पेड़', एक था ठूँठ', 'दो कलाकार' 'कुटज', 'क्रोध' आदि पाठ पढ़े, जो साहित्यिक हिंदी में लिखे गए हैं। साहित्यिक हिंदी से तात्पर्य है वह हिंदी जो साहित्य की विविध विधाओं के लेखन में प्रयोग की जाती है। आप जानते ही हैं 'साहित्य' के अंतर्गत गद्य तथा पद्य समाहित होता है और गद्य में कथा-साहित्य–उपन्यास, कहानी तथा अन्य विविध विधाएँ–निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी, रिपोर्ताज, यात्रावृत्तांत, साक्षात्कार आदि आती हैं। आपने अपनी अन्य पुस्तकों में श्रेष्ठ निबंध पढ़े हैं। जिनमें क्रोध और 'कुटज' चिंतनपरक निबंध या 'पीढ़ियाँ और गिट्टियाँ' व्यंग्य निबंध हैं। साहित्यकार मोहन राकेश का 'आखिरी चट्टान' एक यात्रावृत्तांत है और मन्नू भंडारी की रचना 'दो कलाकार' कहानी है। साहित्यिक हिंदी में शैलीगत विशेषताएँ होती हैं, मुहावरेदार भाषा होती है और सूक्ति, लोकोक्ति, पद्य आदि का प्रयोग किया जा सकता है। जिससे उसमें लालित्य भी होता है, जिसे पढ़कर मानव कुछ सीखने को बाध्य होता है। यह न समझ लें कि साहित्यिक हिंदी से बिल्कुल भिन्न हिंदी-प्रयोजन मूलक हिंदी होती है। बल्कि यह वह हिंदी है जिसका उपयोग हम सरकारी पत्राचार, संक्षेपण, संपादकीय, बैंक की गतिविधियों के निपटान के लिए कामकाजी हिंदी के रूप में करते हैं।

प्रयोजनमूलक हिंदी के मुख्य रूप से छह क्षेत्र देखे जा सकते हैं–

- **तकनीकी भाषा**–यह इंजीनियरी, विज्ञान शास्त्र या चिकित्सा आदि के क्षेत्र में प्रयुक्त भाषा और विशेष शब्दावली का रूप है।
- **कार्यालयी भाषा**–सरकारी कामकाज या प्रशासन में प्रयुक्त होने वाला भाषा रूप।
- **वाणिज्यिक भाषा**–यह वाणिज्य, बैंक या मंडियों में प्रयुक्त भाषा का रूप है।
- **जनसंचारी भाषा**–पत्रकारिता, आकाशवाणी, दूरदर्शन और विज्ञापनों में प्रयुक्त भाषा।
- **सामाजिक भाषा**–इसका प्रयोग सामाजिक कार्यकर्ता करते हैं।
- **साहित्यिक भाषा**–इसका प्रयोग काव्य, नाटक, साहित्य शास्त्र आदि की भाषा में होता है। यह आप ऊपर पढ़ आए हैं।

टिप्पणी

इस प्रकार की भाषा का प्रयोग सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करने में विशेष रूप से किया जाता है। प्रत्येक क्षेत्र में अनेक उपक्षेत्र होते हैं जिनकी भाषा कुछ भिन्न होती है, जैसे कार्यालय में लेखा विभाग की भाषा में लेखा संबंधी शब्द अधिक होते हैं। इसी प्रकार पत्रकारिता में समाचार, विज्ञापन, फीचर, संपादकीय आदि अनेक उपक्षेत्र होते हैं, जिनमें प्रयुक्त भाषा के स्वरूप में अंतर होता है। यहाँ सुप्रसिद्ध संपादक राजेंद्र यादव का एक संपादकीय 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' उदाहरण के रूप में दिया जा रहा है जिसमें देश की विविध समस्याओं को उभारा गया है। इसी प्रकार 26 वें पाठ में 'आखिरी चट्टान' शीर्षक से आप गद्य की नवीन विधा–यात्रावृत्तांत पढ़ेंगे।

इस पाठ का विश्लेषण पढ़ने से पहले हम यह जान लें कि संपादकीय किसे कहते हैं।

16.4 संपादकीय से तात्पर्य

आप जब अखबार उठाते हैं तो सबसे पहले आपकी नज़र उसके पहले पृष्ठ यानी मुख पृष्ठ पर जाती है, जिस पर उस दिन के महत्त्वपूर्ण ताज़ा समाचार छपे होते हैं। मुख पृष्ठ पढ़ने के बाद आपको पता चलता है कि उस दिन की बड़ी खबरें क्या-क्या हैं। इसके बाद आप अपनी रुचि के अनुसार खेलों, व्यापार, स्थानीय घटनाओं आदि की खबरों के लिए पृष्ठ पलटते हैं। अखबार के बीच के हिस्से में आपने एक पृष्ठ ऐसा देखा होगा जिस पर खबरें नहीं बल्कि लेख, संपादकीय टिप्पणियाँ, संपादक के नाम पत्र आदि छपे होते हैं। उसी संपादकीय पृष्ठ के एक हिस्से में उस दिन की मुख्य खबरों या कुछ दिन पहले घटी या निकट भविष्य में घटने वाली घटना पर टिप्पणियाँ छपी होती हैं। इसे संपादकीय कहा जाता है। साप्ताहिक, मासिक, वार्षिक पत्रिकाओं में भी संपादकीय लिखने की परंपरा है। संपादकीय पृष्ठ वास्तव में अखबार का सबसे गंभीर और चिंतन प्रधान भाग होता है।

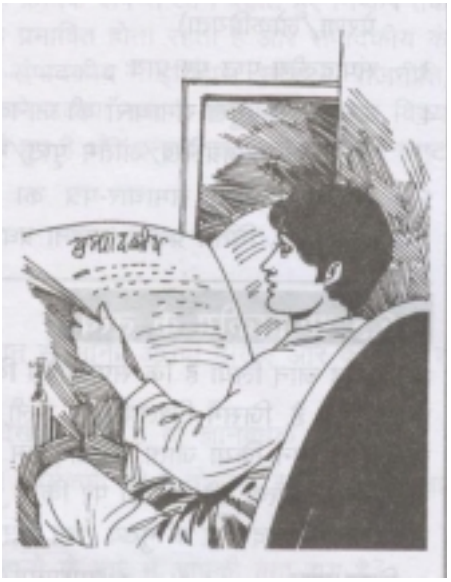

संपादकीय को किसी पत्र या पत्रिका का दर्पण कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। इसे पढ़कर पत्र की नीति तथा विभिन्न समस्याओं, विषयों और घटनाओं पर उसके दृष्टिकोण का पता चल जाता है। संपादकीय अधिकतर पत्र-पत्रिका के संपादक द्वारा ही लिखा जाता है। परंतु अब यह प्रथा खत्म होती जा रही है। संपादक के पास अन्य अनेक ज़िम्मेदारियाँ होने तथा विषयों की बढ़ती हुई विविधता के कारण हमेशा ऐसा संभव नहीं रहता। इसलिए अखबार के वरिष्ठ संपादकों से उनकी विशेषताओं के अनुरूप संपादकीय लेख या टिप्पणियाँ लिखाई जाती हैं। परंतु मासिक पत्रिकाओं, विशेषकर साहित्यिक पत्रिकाओं के संपादकीय लेख या टिप्पणियाँ स्वयं संपादक द्वारा लिखी जाती हैं। ये टिप्पणियाँ प्रायः सामयिक विषय से संबंधित घटनाक्रम पर प्रतिक्रिया के रूप में होती हैं। उदाहरण के लिए फिल्मी पत्रिका में फिल्मी विषयों पर संपादकीय लिखा जाता है तो

विज्ञान संबंधी पत्रिका में वैज्ञानिक विषयों पर संपादकीय लिखा जाएगा। परंतु कई बार ऐसी घटना भी हो जाती है जिस पर सब प्रकार की पत्र-पत्रिकाएँ अपनी राय प्रकट करना चाहती हैं। चंद्रमा तक मनुष्य का पहुँचना, सुनामी का आना या अकाल, महामारी अथवा तूफ़ान आदि से लाखों के मरने जैसी मानवीय घटना सब तरह के पत्रों के संपादकीय का विषय बन सकती है।

'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' शीर्षक से प्रकाशित यह संपादकीय दिल्ली से छपने वाली मासिक साहित्यिक पत्रिका 'हंस' से लिया गया है, जिसे पत्रिका के संपादक राजेंद्र यादव ने लिखा है। 'हंस' साहित्यिक पत्रिका है और इसके संपादक स्वयं हिंदी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार हैं। अतः उनका शिक्षा तथा साक्षरता जैसे विषय पर टिप्पणी करना स्वाभाविक है। इसमें राजेंद्र यादव ने अपनी चुटीली और व्यंग्यात्मक शैली में यह बताने की कोशिश की है कि हमारे देश में मनोरंजन, ऐशो-आराम तथा कंप्यूटर जैसे बड़े-बड़े आधुनिक उपकरणों पर तो बेतहाशा खर्च किया जा रहा है परंतु ज्ञान प्रसार की बुनियादी चीज़–किताब पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा। उन्होंने इसे सामंतों, पूँजीपतियों, नेताओं और बहुराष्ट्रीय कंपनियों की साज़िश बताया है।

पाठगत प्रश्न 16.1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर खाली स्थान में सही शब्द लिखकर दीजिए:

1. संपादकीय किसी पत्र या पत्रिका का .....होता है। (सार/उद्देश्य/दर्पण/संदेश)
2. संपादकीय से अखबार की ..... झलकती है। (नीति/भावना/प्रेरणा/लोकप्रियता)
3. संपादकीय पृष्ठ पर प्रायः .....नहीं छपती। (लेख/टिप्पणियाँ/पत्र/खबरें)
4. अखबार में प्रमुख समाचारों की जानकारी .....को देखकर मिल जाती है। (संपादकीय/अग्रलेख/अंतिम पृष्ठ/मुख पृष्ठ)
5. संपादकीय पृष्ठ समाचार-पत्र का सबसे गंभीर और .....पृष्ठ होता है। (लोकप्रिय/चिंतन प्रधान/भावना प्रधान/सूचना प्रधान)

16.5 संपादकीय के तत्त्व

आपने यह जान लिया है कि संपादकीय किसी पत्र-पत्रिका की ऐसी गंभीर और चिंतन प्रधान विधा है, जिसमें विश्लेषणपूर्ण शैली में किसी समसामयिक विषय या घटना का संक्षिप्त विवेचन किया जाता है। अब हम संपादकीय विधा के मुख्य तत्त्वों पर विचार करेंगे। इन्हीं तत्त्वों की कसौटी पर किसी संपादकीय के गुण-दोषों की पहचान की जा सकती है। संपादकीय के मुख्य तत्त्व इस प्रकार हैं:

- विषय-वस्तु
- समसामयिकता
- विवेचनात्मकता
- दृष्टिकोण की स्पष्टता
- भाषा-शैली
- उद्देश्य

अब हम इन सभी तत्त्वों की विस्तार से व्याख्या करेंगे और इनके संदर्भ में 'अनपढ़ बनाए रखने की साजिश' पर विचार करेंगे।

टिप्पणी

विषय-वस्तु

यह संपादकीय का मूल तत्त्व है। किसी कहानी, उपन्यास, नाटक आदि में जो स्थान कथानक का रहता है, वही इस विधा में विषय-वस्तु का है। संपादकीय क्योंकि अत्यंत संक्षिप्त विधा है अतः इसकी विषय-वस्तु में अधिक विस्तार और व्यापकता की गुंजाइश नहीं होती। इसमें प्रायः एक ही विषय को उठाया जाता है तथा तर्क-वितर्क और उदाहरणों की सहायता से विषय का विवेचन करने के उपरांत निष्कर्ष निकाला जाता है, जिससे पाठकों को उस विषय पर अपनी राय बनाने में मदद मिलती है। 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' में मुख्य रूप से भारत के आम लोगों को साक्षर बनाने में आ रही बाधाओं का विवेचन किया गया है। यह संपादकीय 1976 में आम बजट के कुछ प्रावधानों को आधार बनाकर लिखा गया था, जिसमें कागज़ के दाम बढ़ाए गए थे लेकिन पूँजीपतियों और अमीर लोगों द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली ऐशो-आराम की चीज़ों के आयात की छूट दी गई। इस दृष्टि से यह संपादकीय आज की स्थिति में भी प्रासंगिक है।

लेखक ने इस सच्चाई को भूमिका के रूप में प्रस्तुत किया कि एक ओर तो आम जनता को पढ़ाने-लिखाने के लिए सरकार को आवश्यक धन जुटाने में कठिनाई हो रही है तो दूसरी ओर विदेशों से महँगे उपकरणों, जैसे–कंप्यूटरों के आयात की अनुमति दी जा रही है। इस संपादकीय में विरोधाभास की इसी स्थिति को उभारा गया है और टेलीविजन, विज्ञापन, घटिया किताबें, महँगी पत्रिकाएँ, विलासिता की सामग्री, अंधविश्वास जैसे अनेक पहलुओं की चर्चा करते हुए यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि सभा में बैठे लोगों और पूँजीपतियों-उद्योगपतियों की मिली भगत से ऐसी साज़िश चल रही है, जिससे आम जनता शिक्षित न हो सके। यदि शिक्षित हो भी जाए तो वह उपभोक्तावाद और हल्के मनोरंजन के जाल में फँसी रहे और उनमें जागृति तथा चेतना न आने पाए। इस विषय को संपादक क्रमिक रूप से आगे बढ़ाते हुए निष्कर्ष तक ले जाता है, जिससे पाठक उसके तर्कों से प्रभावित होता रहता है और संपादकीय के मूल संदेश को ग्रहण कर लेता है। यद्यपि संपादकीय में इतिहास, साहित्य, राजनीति, अर्थव्यवस्था, मनोविज्ञान जैसे कई विषयों को उठाया गया है किंतु ये सभी मूल विषय 'शिक्षा और साक्षरता' पर कहीं भी हावी नहीं हुए हैं और इनका उल्लेख विषय को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध हुआ है।

क्रियाकलाप

किसी एक दिन आकाशवाणी/दूरदर्शन ध्यान से सुनिए अथवा देखिए और कागज़ पर नोट कीजिए कि–

- मनोरंजक कार्यक्रम अधिक सुनाए/दिखाए जाते हैं या ज्ञानवर्धक कार्यक्रम?
- यदि ज़्यादा संख्या दिल बहलाने वाले कार्यक्रमों की है तो उन्हें सुनना या देखना क्या आपको लाभकारी लगता है?
- दूरदर्शन पर दिखाए जाने वाले विज्ञापनों के बारे में आपकी क्या राय है?
- विज्ञापनों में प्रायः किस तरह की चीज़ों का प्रचार किया जाता है?
- विज्ञापन देखकरऽक्या आपको ऐसा नहीं लगता कि हमें भी वह चीज़ अपने घर में लानी चाहिए?

समसामयिकता

संपादकीय की परिभाषा में आपने पढ़ा कि यह किसी समसामयिक विषय या घटना पर लिखा जाता है। इसका मतलब है कि संपादकीय का विषय कोई ऐसी घटना होती है जो हाल में घटी हो या घटने वाली हो। आमतौर पर उसी घटना को विषय बनाया जाता है जिसका संबंध अधिक-से-अधिक लोगों से हो, जो विषय जितने अधिक लोगों को प्रभावित करता है वह उतना ज़्यादा महत्त्वपूर्ण होता है। परंतु कभी-कभी पत्र या पत्रिका के अपने स्वरूप के कारण आम लोगों के लिए कम महत्त्वपूर्ण विषय पर भी संपादकीय टिप्पणियाँ लिखी जाती हैं। गणित के क्षेत्र में हुई कोई नई खोज विज्ञान पत्रिकाओं के लिए संपादकीय का विषय हो सकती है। किंतु अधिकतर सामान्य पत्र-पत्रिकाएँ शायद इस विषय पर संपादकीय नहीं लिखना चाहेंगी। आपने देखा होगा कि हाल में पेट्रोलियम पदार्थों की कीमतों में की गई वृद्धि पर लगभग सभी अखबारों ने संपादकीय लिखे। यह विषय एकदम समसामयिक भी था और महत्त्वपूर्ण भी, क्योंकि सरकार के इस कदम से पूरे देश की जनता प्रभावित हुई थी।

इस आधार पर 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' संपादकीय खरा उतरता है। यह 1986 के केंद्रीय बजट में अमीरों के इस्तेमाल की ऐशो-आराम की बहुत-सी चीज़ों के आयात की छूट देने तथा कागज़ के दाम बढ़ाने के कदम को आधार बनाकर देश की संस्कृति पर हो रहे प्रहारों तथा सही शिक्षा की अनदेखी होने की दुखद स्थिति का बड़ी कुशलता से चित्रण किया है। शिक्षा की कमी तथा टी.वी., वीडियो, कंप्यूटर जैसी आयातित चीज़ों के लिए बढ़ती हुई ललक उस समय के हिसाब से और आज के हिसाब से भी समसामयिक होने के साथ-साथ महत्त्वपूर्ण समस्या है। संपादकीय के विषय का चयन संपादक की सूझबूझ और विवेक पर निर्भर करता है। भारत, विशेषकर हिंदी भाषी पाठकों के लिए यह विषय काफ़ी प्रासंगिक है, क्योंकि हमारे यहाँ साक्षरता का प्रतिशत बहुत कम है। जिस समय यह संपादकीय लिखा गया था उस समय तो साक्षरता दर और भी कम थी। साक्षरता के साथ-साथ संपादकीय के लेखक ने टेलीविजन, विज्ञापन, ऐशोआराम के सामान के आयात की अनुमति देने के जिन मुद्दों को उठाया है, वे भी उस समय बहुत थे क्योंकि उस समय देश में उस उपभोक्तावाद की शुरूआत हो रही थी, जो अब जड़ें जमा चुका है। इस प्रकार न केवल मूल विषय बल्कि गौण रूप से जिन विषयों की चर्चा हुई है, वे आज भी समसामयिकता की कसौटी पर खरे उतरते हैं।

विवेचनात्मकता

अभी आपने पढ़ा कि संपादकीय किसी समसामयिक विषय या घटना पर आधारित होना चाहिए। संपादकीय में विषय ही स्पष्टता और सुबोधता के लिए आवश्यक है कि आलेख में विषय से जुड़े अन्य सभी पहलुओं को भी शामिल किया जाए। घटना से पहले की स्थिति, उसके संभावित प्रभाव तथा अन्य स्थानों पर इस तरह की घटनाओं की प्रतिक्रिया आदि सभी संदर्भों की बारीक विवेचना करने से ही विषय पूरी तरह स्पष्ट हो सकता है। ऊपर हमने पेट्रोलियम पदार्थों में वृद्धि की घटना का उल्लेख किया है, जिस पर लगभग सभी अखबारों में संपादकीय टिप्पणियाँ छपीं। यदि उस समय का कोई संपादकीय पढ़ा हो तो आपने देखा होगा कि उसमें पेट्रोल, डीजल, रसोई गैस, मिट्टी

टिप्पणी

का तेल जैसे पदार्थों के मूल्य बढ़ाए जाने की चर्चा करते हुए यह भी बताया गया कि इस कदम से बाकी वस्तुओं के दामों पर भी असर पड़ेगा। जहाँ इस वृद्धि के लिए सरकार की मजबूरी जताई गई वहाँ यह भी बताया गया कि इससे आम लोगों की तकलीफ़ें किस तरह बढ़ जाएँगी। कुछ संपादकीयों ने मूल्यों में वृद्धि में कमी लाने का भी सुझाव दिया। एक समाचार पत्र विशेष ने अपनी राजनीतिक वचनबद्धता के कारण सरकार के पक्ष को प्रस्तुत किए बिना मूल्य वृद्धि की जमकर आलोचना की। यह उचित नहीं है, क्योंकि संपादकीय में अपनी राय व्यक्त करते हुए भी विषय या समस्या विशेष के सभी पहलुओं को पाठकों के सामने लाना आवश्यक है।

प्रस्तुत संपादकीय विवेचनात्मकता की दृष्टि से श्रेष्ठ संपादकीय लेखों की कोटि में रखा जा सकता है। इसमें विषय का बहुत ही गहराई और विस्तार के साथ विवेचन किया गया है। बजट में कागज़ की कीमत की वृद्धि सामान्य शब्दों में आम लोगों को शिक्षा से वंचित रखने के साथ-साथ संस्कृति को भ्रष्ट करने के षड्यंत्र को पहचानना तथा उसकी पृष्ठभूमि, परिणामों और विविध रूपों को साफ़-साफ़ बयान करना संपादक की पैनी दृष्टि तथा विवेचन क्षमता का प्रमाण है। संपादकीय में यद्यपि मुख्यतः पूँजीवाद के विरोध की ही दृष्टि सामने आई है, परंतु जिस संदर्भ में संपादक ने पूँजीवाद की आलोचना की है उसे देखते हुए यह विश्वसनीय और तर्कसंगत लगती है। तार्किक ढंग से विषय की प्रस्तुति ही उसे विश्वसनीय बनाती है। श्री राजेंद्र यादव ने अपने देश के साथ-साथ विदेशी घटनाओं और इतिहास के कई पन्नों को पलटते हुए यह साबित करने की कोशिश की है कि शिक्षा और साक्षरता विकास की पहली सीढ़ियाँ हैं और सत्ता तथा अधिकार के भूखे लोग आम जनता को इस शक्ति से वंचित रखने के प्रयास में लगे रहते हैं।

दृष्टिकोण की स्पष्टता

आप जान चुके हैं कि किसी पत्र या पत्रिका का संपादकीय उसमें छपे समाचारों, लेखों तथा टिप्पणियों से सर्वथा भिन्न होता है। संपादकीय में विषय के विवेचन, वर्णन तथा विविध पहलुओं के समावेश के साथ-साथ एक स्पष्ट राय व्यक्त की जाती है जो जनमत निर्माण में सहायक होती है। यह राय, आलोचना या सराहना जहाँ अधिक से अधिक पाठकों के हित को ध्यान में रखकर दी जाती है, वहीं उस पत्र विशेष की अपनी नीति को भी स्पष्ट करती है। इस प्रकार संपादकीय टिप्पणी पाठकों को किसी समस्या या विषय विशेष के संदर्भ में पाठकों को रास्ता दिखाने के साथ-साथ पत्र के दृष्टिकोण को भी स्पष्ट करती है। यही कारण है कि किसी घटना या समस्या का विवेचन एक समान होते हुए भी उसके बारे में अलग-अलग अखबारों का तेवर अलग-अलग होता है। आप यदि किसी एक दिन के चार-पाँच अखबारों से संपादकीय पढ़ेंगे तो आप पाएँगे कि एक ही विषय पर छपे संपादकीय में अलग-अलग दृष्टिकोण प्रकट किया गया है। केंद्र में सरकार बनाने से पहले जब संयुक्त मोर्चे ने न्यूनतम साझा कार्यक्रम तैयार किया तो लगभग सभी अखबारों ने उस पर संपादकीय लिखे, जिनका संक्षेप में ब्योरा भी दिया। परंतु एक अखबार ने उसे अच्छी शुरूआत बताया, दूसरे ने इसे अवसरवाद कहा तो तीसरे अखबार ने इसे सही घोषित करते हुए भी उसके सफलतापूर्वक लागू होने पर शक जाहिर किया।

संपादकीय के इस तत्त्व की दृष्टि से 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' आदर्श संपादकीय है। इसमें संपादक ने बिना किसी लाग-लपेट के एकदम स्पष्ट राय प्रकट की है कि किस तरह देश की जनता का शोषण करने वालों ने जनता को जागृति, सूझबूझ और चेतना ला सकने वाली पुस्तकों से वंचित करने का षड्यंत्र रच रखा है। 'हंस' प्रगतिवादी साहित्य और चिंतन का पोषण करने वाली पत्रिका है और उसके संपादक राजेंद्र यादव प्रमुख प्रगतिवादी लेखक हैं। संपादकीय में पूँजीपतियों की आलोचना तथा जनसाधारण के हितों का समर्थन उनकी तथा पत्रिका की विचारधारा और दृष्टिकोण के सर्वथा अनुकूल है। साहित्यिक पत्रिका होने के कारण ही साहित्य का पक्ष लेना पत्रिका तथा संपादक की ईमानदारी का द्योतक है।

पाठगत प्रश्न 16.2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर सही के सामने सही (√) तथा गलत के सामने गलत (X) का चिह्न लगाकर दीजिएः

1. संपादकीय का विषय सामयिक होना आवश्यक नहीं है। ( )
2. संपादकीय में पत्र की विचारधारा झलकनी चाहिए। ( )
3. 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' का आधार कोई सामयिक घटना नहीं है। ( )
4. किसी विषय या समस्या का विवेचन अलग-अलग होते हुए भी सभी अखबारों की राय एक जैसी होती है। ( )
5. संपादकीय का आदर्श विषय वह होता है जिसका सरोकार अधिक-से-अधिक लोगों से हो। ( )

भाषा-शैली

संपादकीय के जिन तत्त्वों की हम ऊपर चर्चा कर चुके हैं वह इस विधा का विषय पक्ष है। आइए, अब संपादकीय के कलापक्ष यानी स्वरूप और भाषा-शैली की समीक्षा करें।

आप जान चुके हैं कि संपादकीय में किसी समसामायिक विषय का चिंतनपूर्ण विवेचन होता है जिसमें पत्र-पत्रिका का दृष्टिकोण और समस्या विशेष पर राय भी व्यक्त की जाती है। इसे पत्र की नीति का आईना कहा जा सकता है। अतः संपादकीय एक मर्यादा में बँधा रहता है। वास्तव में यही पहलू संपादकीय को समाचार से अलग करता है। समाचार में वह सब होता है जो घटित हुआ है, किंतु संपादकीय उससे ऊपर उठकर समूचे घटनाक्रम को अतीत और भविष्य की तुला पर तौलकर चिंतनपूर्ण तथा तर्कपूर्ण शैली में लिखी गई टिप्पणी होती है। यदि समाचार स्वतंत्र रूप से बहने वाले नाले हैं तो संपादकीय उन पर निर्मित किया गया जलाशय है। यह विषय की गहराई, दृष्टिकोण की व्यापकता तथा शैली की मर्यादा का संगम है।

संपादकीय में अधिक विस्तार की गुंजाइश नहीं है। इसका आकार संक्षिप्त होना चाहिए। यदि आप इसे लेख बना देंगे तो यह संपादकीय के मापदंड से गिर जाएगा। हाँ,

टिप्पणी

कभी-कभी विषय अत्यंत महत्त्वपूर्ण होने पर संपादकीय कुछ अतिरिक्त रूप से विस्तृत हो सकता है। किसी देश पर विजय या दुख या सुख की कोई अभूतपूर्व मानवीय घटना घटने पर लंबे-लंबे संपादकीय लिखने की परंपरा रही है। कई बार तो संपादकीय बिल्कुल न लिखना भी अर्थपूर्ण हो जाता है। 1975 में एमरजेंसी लगने पर कई समाचार पत्रों ने अखबारों की आज़ादी खत्म करने पर विरोध प्रकट करने के लिए संपादकीय वाला स्थान एकदम खाली छोड़ने की नीति अपनाई। इसके विपरीत महात्मा गांधी, नेहरू, जयप्रकाश नारायण की मृत्यु तथा महाराष्ट्र में भूकंप, सुनामी की तबाही के बारे में लंबे-लंबे संपादकीय लिखे गए।

अखबारों के अति महत्त्वपूर्ण विषयों पर संपादकीय को उसके निर्धारित पृष्ठ की बजाय मुखपृष्ठ पर छाप दिया जाता है, जो इस बात का परिचायक है कि वह विषय असाधारण है। उदाहरण के लिए 1997-98 के बजट अर्थव्यवस्था को गति देने की दृष्टि से अभूतपूर्व मानते हुए कुछ आर्थिक समाचार पत्रों ने बजट पर अपने संपादकीय मुख पृष्ठ पर प्रकाशित करके बजट के असाधारण महत्त्व को स्वीकार किया।

शैली की भाँति संपादक की भाषा भी गंभीरता के गुण से संपन्न होनी चाहिए। हाँ, कभी-कभी हल्के विषय के लिए व्यंग्यपूर्ण, हास्यमयी और चुलबुली भाषा का प्रयोग किया जा सकता है। अन्य विधाओं में भाषा के प्रवाह, ओज, सुबोधता और चुस्ती जैसी जो विशेषताएँ अपेक्षित हैं, वे संपादकीय विधा पर भी लागू होती हैं। मुहावरे तथा उक्तियाँ हमेशा भाषा में प्रवाह लाती हैं और ये दोनों गुण संपादकीय की भाषा का स्तर भी ऊँचा उठाते हैं। स्वरूप की तरह भाषा का रूप भी समाचार और संपादकीय को अलग करता है। व्यंग्य का पुट अन्य विधाओं की तरह संपादकीय विधा को भी रोचक, प्रभावशाली और पठनीय बनाता है।

'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' स्वरूप की दृष्टि से आदर्श संपादकीय से कुछ हटकर है। यह सच है कि अन्य पत्रिकाओं की तुलना में प्रस्तुत संपादकीय बहुत विस्तार से लिखा गया है। इससे आधे आकार में भी इसी विषय को इतनी ही प्रभावपूर्ण शैली में लिखा जा सकता है।

जहाँ तक भाषा का संबंध है वह सुबोध, ओजपूर्ण तथा चुटीली बन पड़ी है। यह विषय की गंभीरता को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करती है और पत्रिका के पाठकों के स्तर के अनुरूप ही खरी उतरती है। विषय के बहाव के अनुसार इसमें विविधता के भी दर्शन होते हैं।

इसमें व्यंग्य का बहुत जोरदार ढंग से प्रयोग किया गया है। इस संपादकीय के लेखक स्वयं एक प्रतिष्ठित साहित्यकार और पत्रकार हैं, अतः उन्होंने सही और अर्थपूर्ण शब्दों का प्रयोग करते हुए प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग किया है। साहित्य और पत्रकारिता की भाषा में अंतर रहता है। साहित्य की भाषा आलंकारिक तथा क्लिष्ट हो सकती है, जबकि पत्रकारिता की भाषा में ऐसी गुंजाइश नहीं होती। प्रस्तुत संपादकीय में कहीं-कहीं चमत्कार लाने का भी प्रयास किया गया है। संपादकीय में आवश्यकता और अवसर के अनुकूल उर्दू तथा अंग्रेज़ी शब्दों का खुलकर प्रयोग हुआ है। संपादकीय का अंतिम वाक्य

चमत्कार और प्रभाव की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है–*''या खुदा ये प्रायोजित नाखुदा हमें कहाँ ले जा रहे हैं?''*

विसांस्कृतिक वैज्ञानिकता जैसी नवसृजित शब्दावली संपादक के भाषा पर अधिकार की द्योतक है। परंतु एक शब्द है– 'सैडिस्टपन'। अंग्रेज़ी शब्द के 'सैडिस्ट' के साथ हिंदी प्रत्यय 'पन' के मेल से यह शब्द बना है। आगे यह शब्द चल पाएगा या नहीं, यह भविष्य बताएगा। इसी प्रकार रचनाकार नए-नए शब्दों का गठन करता है, जनता उनका उपयोग करती है। इसी प्रकार का एक शब्द दादागिरी, नेतागिरी के आधार पर बना, गांधीगिरी जो खूब चला। श्री यादव का व्यंग्य कहीं-कहीं बहुत तीखा भी हो जाता है। एक उदाहरण देखिए *''अपने ऋषि-मुनि मूर्ख नहीं थे जिन्होंने कुछ लोगों की ज़िंदगी से शिक्षा यानी किताब को एकदम बाहर निकाल कर उन्हें सेवा धर्म सिखाया था।''*

आपने पाठ पढ़ते हुए ध्यान दिया होगा कि लेखक बात को विस्तार से समझाता है और उसके बाद उसे एक छोटे से किंतु अधिक प्रभावी वाक्य से समाप्त करता है। उदाहरण के लिए पृष्ठ संख्या-85 पर पहले अनुच्छेद को पुनः ध्यान से पढ़ें तो पाएँगे कि यहाँ भारतीय अनुसंधान में हो रहे नुकसान की बात लेखक ने उठाई है कि जब बनी-बनाई वस्तुएँ और उनके छोटे-बड़े पुर्ज़े बाहर से आ रहे हैं और उन्हें जोड़-जाड़कर अपने देश की मोहर लगा कर ही नाम मिल रहा है तो स्वयं अनुसंधान और खोज करने की क्या आवश्यकता है। इस बात पर लेखक ने *''न अनुसंधान की ज़रूरत है न विकास की''* रोषपूर्ण वाक्य कह कर चोट की है। इसी प्रकार स्थान-स्थान पर लेखक ने पैने वाक्य रचे हैं, जो सोचने-विचारने पर मजबूर करते हैं, जैसे–*''शार्टकट कितना आत्मघाती है।''*, *''आदमी को सोचने-समझने के लिए कोई मौका नहीं देना चाहते''* आदि।

पाठगत प्रश्न 16.3

दिए गए विकल्पों में से उपयुक्त विकल्प चुन कर निम्नलिखित कथनों को पूरा कीजिए–

1. संपादकीय की भाषा
   - (क) अलंकारपूर्ण होनी चाहिए।
   - (ख) सरल और सुबोध होनी चाहिए।
   - (ग) जटिल और क्लिष्ट होनी चाहिए।
   - (घ) उर्दू, अंग्रेज़ी आदि से रहित होनी चाहिए।
2. संपादकीय में
   - (क) घटना या समस्या पूरे विस्तार से लिखी जाए।
   - (ख) समस्या का उल्लेख किया जाए।
   - (ग) घटना या समस्या का विवेचन किया जाए।
   - (घ) समस्या का उल्लेख किए बिना उस पर टिप्पणी की जाए।

टिप्पणी

3. ''अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश''
   (क) स्वरूप की दृष्टि से आदर्श संपादकीय है।
   (ख) संपादकीय की भाषा में पैनेपन का अभाव है।
   (ग) विषय का विवेचन दोषपूर्ण है।
   (घ) विवेचन की दृष्टि से श्रेष्ठ संपादकीय में गिना जा सकता है।
4. प्रस्तुत संपादकीय में
   (क) पुस्तकों को आवश्यकता से अधिक महत्त्व दिया गया है।
   (ख) सरकार का समर्थन किया गया है।
   (ग) आधुनिकता का विरोध किया गया है।
   (घ) पूँजीवाद के इरादों का पर्दाफ़ाश किया गया है।
5. संपादकीय की शैली
   (क) मर्यादित होनी चाहिए।
   (ख) विस्तृत और स्वतंत्र होनी चाहिए।
   (ग) चमत्कारपूर्ण होनी चाहिए।
   (घ) व्यंग्यपूर्ण और चुटीली होनी चाहिए।
6. कभी-कभी संपादकीय का स्थान खाली क्यों छोड़ा जाता है? उदाहरण सहित कारण स्पष्ट कीजिए।
7. कभी-कभी संपादकीय अखबार के मुख पृष्ठ पर क्यों छापा जाता है? उदाहरण सहित उत्तर लिखिए।

उद्देश्य

संपादकीय में विषय के विवेचन के साथ-साथ एक स्पष्ट संदेश निहित रहता है जो संपादकीय लिखने के उद्देश्य की ओर संकेत करता है। यह मूल संदेश या उद्देश्य संपादकीय के आलेख से पूरी तरह उभरकर सामने आना चाहिए तथा आलेख में आया कोई अन्य विषय या तर्क इस मूल संदेश पर हावी नहीं होना चाहिए। इस दृष्टि से प्रस्तुत संपादकीय को सफल माना जा सकता है। संपादकीय में प्रारंभ से अंत तक भारतीय परिवेश में शिक्षा के महत्त्व को रेखांकित किया गया है और आधुनिक युग के नए-नए उपकरणों तथा परंपरागत रीति-रिवाजों की चर्चा करते हुए इसी तथ्य से पाठकों को अवगत कराने का प्रयास किया गया है कि शिक्षा जैसी अत्यंत आवश्यक चीज़ से आप लोगों को वंचित रखा जा रहा है और सरकार तथा पूँजीपति वर्ग व्यर्थ की ऐसी चीज़ों पर पैसा लगा रहे हैं जिनसे केवल मुट्ठी भर लोगों की स्वार्थपूर्ति और मनोरंजन होता है। रचनाकार इतिहास, समाज, राजनीति, अर्थनीति और मनोविज्ञान का सहारा लेता है। लेखक ने बताया है कि अच्छी किताबों ने जहाँ महापुरुषों और अच्छी संस्कृतियों के विकास में मदद दी है, वहीं तानाशाही ने हमेशा किताबें नष्ट करने पर ध्यान दिया है, क्योंकि घटिया किताबों, चमकदार पत्रिकाओं, टेलीविजन और विज्ञापनों

टिप्पणी

का जाल भी लोगों को सही ज्ञान के रास्ते से भटका कर मन बहलाव और भोग-विलास के रास्ते पर ले जाने का काम कर रहा है। कागज़ की कीमतें महँगी होने से दुखी होकर लिखा गया यह संपादकीय शिक्षा की उपेक्षा की ओर पाठकों का ध्यान ले जाने के अपने उद्देश्य में सफल रहा है।

शीर्षक की सार्थकता

आप संपादकीय के सभी मुख्य तत्त्वों से परिचित हो चुके हैं। किसी भी विधा का शीर्षक उसका मुख होता है, जिस पर रचना के शरीर और आत्मा की छवि अंकित होती है। संपादकीय चूँकि स्वयं किसी पत्र-पत्रिका और विषय या समस्या का दर्पण होता है, अतः इसमें शीर्षक का विषय सहज ही स्पष्ट होना चाहिए। शीर्षक में पांडित्य प्रदर्शन की गुंजाइश नहीं होती। शीर्षक थोड़े से शब्दों में व्यक्त हो जाना चाहिए तथा चुटीला व चुस्त होना चाहिए। ऐसा न हो कि शीर्षक को समझने के लिए पूरा संपादकीय पढ़ना पड़े।

'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' शीर्षक इस संपादकीय के मूल विषय और उद्देश्य को अत्यंत सार्थक ढंग से अभिव्यक्त करता है। केवल पाँच शब्दों के इस शीर्षक में तीखापन भी है, क्योंकि इसमें एक सामूहिक कार्रवाई को साज़िश कहा गया है। संपादकीय में यद्यपि अनेक विषयों का उल्लेख हुआ है परंतु उन सबका मूल स्वर इस तथ्य को उजागर करना है कि जाने-अनजाने जो उपाय किए जा रहे हैं वे आम लोगों को शिक्षा से वंचित रखने की साज़िश है। इससे बचकर जो व्यक्ति साक्षर हो भी जाते हैं उन्हें अच्छी किताबों से दूर रखने के सुनियोजित षड्यंत्र का आभास देते हैं। शीर्षक के सभी शब्द, सरल, सुबोध और सीधे हैं किंतु 'साज़िश' शब्द ने शीर्षक को इतना वजनदार, अर्थपूर्ण और नुकीला बना दिया है कि वह पाठक का ध्यान बरबस ही अपनी ओर खींच लेता है। यही गुण संपादकीय का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू है। इस दृष्टि से शीर्षक पूरी तरह सार्थक प्रतीत होता है।

16.5 भाषा प्रयोग

1. पाठ का पहला वाक्य है:

   रोटी, कपड़ा और मकान के बाद जिस देश में पहली कहें या एकमात्र **आवश्यकता साक्षरता** और शिक्षा है, वहाँ ऐसी **दृष्टिहीनता** या तो **मूर्खता** के कारण है या फिर **धूर्तता** के कारण।

   उपर्युक्त वाक्य में 'ता' प्रत्यय से निर्मित पाँच शब्द प्रमुख रूप से आए हैं। हिंदी में उपसर्गों और प्रत्ययों से अनेक शब्दों का निर्माण किया जा सकता है। 'ता' प्रत्यय सबसे अधिक प्रयुक्त होता है। निम्नलिखित प्रत्ययों का एक-एक उदाहरण पाठ से छाँटिए और दो-दो उदाहरण अपनी ओर से लिखिए–

   –ईय _____ _____ _____

   –ई _____ _____ _____

   –आई _____ _____ _____

—इक _____ _____ _____

—पन _____ _____ _____

2. शब्द निर्माण की दूसरी प्रक्रिया है समास के द्वारा कुछ शब्दों को मिलाकर एक पद बना देना। जैसे:

(क) मशीन के समान मानव ⟹ मशीन-मानव
सब में व्यापक है जो ⟹ सर्वव्यापक
रक्तबीज के समान लहर ⟹ रक्तबीजी लहर
ठीक से सोची गई है जो ⟹ सुचिंतित

(ख) मानव की सभ्यता ⟹ मानव-सभ्यता
जीवन की पद्धति ⟹ जीवन-पद्धति
डाक के लिए खर्च ⟹ डाक-खर्च
देवी का जागरण ⟹ देवी-जागरण
प्रकाशन के लिए गृह ⟹ प्रकाशन-गृह

(ग) ज्ञान और विज्ञान ⟹ ज्ञान-विज्ञान
संस्कृति और साहित्य ⟹ संस्कृति-साहित्य
सोच और विचार ⟹ सोच-विचार
कप और गिलास ⟹ कप-गिलास
पत्र और पत्रिकाएँ ⟹ पत्र-पत्रिकाएँ

उपर्युक्त तीनों प्रकार के तीन-तीन उदाहरण दीजिए–

....

....

....

16.6 आपने क्या सीखा

1. साहित्यिक हिंदी और प्रयोजनमूलक हिंदी में अंतर होता है। साहित्यिक हिंदी आलंकारिक, लालित्यपूर्ण और मुख्य रूप से कविता और गद्य साहित्य के लेखन में प्रयुक्त होती है। जबकि प्रयोजनमूलक हिंदी भाषा का व्यावहारिक पक्ष है, जो मुख्यतः तकनीकी भाषा, कार्यालयी भाषा, वाणिज्य की भाषा, जन संचार की भाषा और सामाजिक व्यवहार में प्रयुक्त भाषा होती है।

2. संपादकीय पत्र-पत्रिकाओं की वह विधा है, जिसमें किसी समसामयिक विषय या

समस्या पर चिंतनपूर्ण ढंग से टिप्पणी की जाती है और उसमें पत्र-पत्रिका का दृष्टिकोण व्यक्त होता है।

3. 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' विषयवस्तु, समसामयिकता, विवेचनात्मकता, दृष्टिकोण की स्पष्टता, भाषा आदि तत्त्वों की दृष्टि से प्रशंसनीय संपादकीय है, परंतु स्वरूप की दृष्टि से अपेक्षाकृत अधिक लंबा है।
4. आम लोगों को शिक्षा से वंचित रखने के उद्देश्य से सामंतवादी और पूंजीपति वर्गों द्वारा ऐसी परिस्थितियाँ पैदा की जा रही हैं, जिनसे जनता में चेतना और जागृति न आ सके।
5. संपादकीय स्वरूप और भाषा की दृष्टि से समाचार से काफ़ी भिन्न होता है।
6. संपादकीय का शीर्षक 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' विषय को प्रभावशाली और व्यंग्यपूर्ण ढंग से व्यक्त करता है।

16.7 योग्यता विस्तार

(क) लेखक परिचय

राजेंद्र यादव का जन्म 28 अगस्त 1929 को हुआ था। आपने आगरा से शिक्षा प्राप्त कर मथुरा, झाँसी और कोलकाता में रहने के बाद राजधानी दिल्ली में अपना स्थायी निवास निश्चित किया। आप की पहली रचना थी–'प्रतिहिंसा' (1947)। इन्होंने कई उपन्यास, कहानियाँ, समीक्षात्मक निबंध और नाटक लिखे। आपने 'आवाज़ तेरी है' नामक कविता संग्रह भी लिखा है। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं:

उपन्यास - 'सारा आकाश', 'उखड़े हुए लोग', 'शह और मात', 'एक इंच मुस्कान', 'कुलटा', 'अनदेखे अनजान पुल'।

कहानी-संग्रह-'देवताओं की मूर्तियाँ', 'खेल-खिलौने', 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'छोटे-छोटे ताजमहल', 'वहाँ तक पहुँचने की दौड़', 'प्रतिनिधी कहानियाँ', 'श्रेष्ठ कहानियाँ' आदि।

समीक्षात्मक निबंध–'कहानी–स्वरूप और संवेदना', 'उपन्यास : स्वरूप और संवेदना', 'कहानी : अनुभव और अभिव्यक्ति', 'काँटे की बात' (चार खंड)।

संपादन–नये साहित्यकार पुस्तक माला में मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेंद्र यादव, फणीश्वरनाथ रेणु, मन्नू भंडारी की चुनी कहानियाँ। एक दुनिया समानांतर, कथा-यात्रा।

साक्षात्कार- 'मेरे साक्षात्कार'।

अनुवाद- आपने 'हमारे युग का एक नायक', 'प्रथम प्रेम', 'बसंत प्लावन' आदि उपन्यासों का हिंदी में अनुवाद किया है तथा चेखव द्वारा लिखित 'हंसनी', 'चेरी का बगीचा' और 'तीन बहनें' नाटक अनूदित किए हैं। आप हिंदी साहित्य की मासिक पत्रिका 'हंस' के संपादक हैं।

(ख) आप अखबारों तथा पत्रिकाओं के संपादकीय कभी-कभी पढ़ते होंगे, संपादकीय के तत्त्वों को ध्यान में रखते हुए अलग-अलग दिनों में छपे पाँच संपादकीय पढ़कर उनकी समीक्षा कीजिए।

(ग) राजेंद्र यादव द्वारा संपादित 'हंस' पत्रिका का ताज़ा अंक लेकर उसमें छपे संपादकीय की भाषा-शैली की विवेचना कीजिए।

(घ) निम्नलिखित विषयों पर संपादकीय लिखने का अभ्यास कीजिए:

1. साक्षरता के प्रसार में दूर शिक्षा का योगदान
2. आपके क्षेत्र में आई बाढ़
3. क्रिकेट में पाकिस्तान पर भारत की जीत
4. पेट्रोलियम पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि
5. बिजली की बार-बार कटौती, जिसमें छात्रों की पढ़ाई पर प्रभाव पर अधिक बल दिया जाए।

(ङ) 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' संपादकीय 1986 में लिखा गया। तब से आज की स्थितियों में काफ़ी परिवर्तन हुआ है। इस संपादकीय के मूलभाव को बनाए रखते हुए नई परिस्थितियों के संदर्भ में इसी विषय पर संपादकीय लिखिए।

16.8 पाठांत प्रश्न

1. संपादकीय की परिभाषा बताते हुए समाचार लेख और निबंध से उसके अंतर को स्पष्ट कीजिए।
2. ''अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश'' की संपादकीय के तत्त्वों के आधार पर समीक्षा कीजिए।
3. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए:
   (क) संपादकीय का स्वरूप और भाषा
   (ख) 'अनपढ़ बनाए रखने की साज़िश' संपादकीय का उद्देश्य
   (ग) साक्षरता का महत्त्व
   (घ) मनुष्य के विकास में साहित्य की भूमिका
4. निम्नलिखित गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए:
   (क) 'दुनिया के सारे तानाशाहों ने सबसे पहले या तो पुस्तकालय जलाए हैं या किताबों को कुचला है।'
   (ख) बहरहाल, पढ़ना बहुत खतरनाक चीज़ है। इससे आदमी को सोचने, समझने और कुछ करने की बीमारी लग जाती है।
   (ग) जिसे जाहिल, मूर्ख, परतंत्र और निर्भर बनाकर रखना है, उसके हाथ में किताब नहीं दी जाएगी।

(घ) लगता है हम भी अब विसांस्कृतिक वैज्ञानिकता की ओर बढ़ रहे हैं–नंगे, भूखे, अशिक्षित और जड़ लेकिन दूरदर्शनों, कारों और कंप्यूटरों के सामने लाइन लगाए हुए।

(ङ) जिन बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आतंक और वर्चस्व को रोकने की आवाज़ें उठाई जा रही हैं उन्हीं की गहरी पकड़ हमारी सारी आर्थिक और राष्ट्रीय नीतियों को तय कर रही हैं।

5. शिक्षा और साक्षरता के प्रसार के लिए क्या उपाय किए जाने चाहिए?

6. क्या आप इस विचार से सहमत हैं कि पूँजीवाद और रूढ़िवाद आम आदमी को साक्षर बनाने में बाधक है, सोदाहरण विवेचना कीजिए।

7. निम्नलिखित वाक्यों को पाठ के आधार पर विस्तार से समझाइए:

(क) सिर्फ़ क्लीयरिंग एजेंट के रूप में काम करेंगे।

(ख) भीतरी लगाव और सरोकार जब संस्कारों में नहीं है तो फिर व्यवहार में कहाँ से आएगा।

(ग) आदमी को सोचने-समझने के लिए कोई मौका नहीं देना चाहते।

8. 'अनपढ़ बनाए रखने की साजिश' संपादकीय का सार लगभग 150 शब्दों में लिखिए।

9. दूर-शिक्षा में दूरदर्शन किस तरह उपयोगी सिद्ध हो सकता है?

10. पुस्तकों की उपेक्षा में लेखक द्वारा बताए गए तीन कारणों का उदाहरण सहित विवेचन कीजिए।

11. 'विसांस्कृतिक वैज्ञानिकता' से क्या अभिप्राय है? उदाहरण देते हुए स्पष्ट कीजिए।

16.9 उत्तरमाला

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. साक्षरता 2. मनोरंजन करो, सुखी रहो। 3. कहीं ये लोग सत्ता हथियाने में बाधा न पहुँचाएँ

4. (ग) 5. (ख), 6. (ग), 7. (क)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

16.1 1. दर्पण, 2. नीति, 3. खबरें, 4. मुख पृष्ठ, 5. चिंतन प्रधान

16.2 1. (X), 2. (√), 3. (X), 4. (X), 5. (√)

16.3 1. (ख), 2. (ग), 3. (घ), 4. (घ), 5. (क)
6. विरोध प्रकट करने के लिए, 7. बहुत महत्त्वपूर्ण होने के कारण